दो बाँके

भगवती चरण वर्मा

दो बाँके

शायद ही कोई ऐसा अभागा हो जिसने लखनऊ का नाम न सुना हो; और युक्तप्रांत में ही नहीं, बल्कि सारे हिंदुस्तान में, और मैं तो यहाँ तक कहने को तैयार हूँ कि सारी दुनिया में लखनऊ की शोहरत है। लखनऊ के सफेदा आम, लखनऊ के खरबूजे, लखनऊ की रेवड़ियाँ - ये सब ऐसी चीजें हैं जिन्हें लखनऊ से लौटते समय लोग सौगात की तौर पर साथ ले जाया करते हैं, लेकिन कुछ ऐसी भी चीजें हैं जो साथ नहीं

ले जाई जा सकतीं, और उनमें लखनऊ की जिंदादिली और लखनऊ की नफासत विशेष रूप से आती हैं।

ये तो वे चीजें हैं, जिन्हें देशी और परदेशी सभी जान सकते हैं, पर कुछ ऐसी भी चीजें हैं जिन्हें कुछ लखनऊवाले तक नहीं जानते, और अगर परदेसियों को इनका पता लग जाए, तो समझिए कि उन परदेसियों के भाग खुल गए। इन्हीं विशेष चीजों में आते हैं लखनऊ के 'बाँके'।

'बाँके' शब्द हिंदी का है या उर्दू का, यह विवादग्रस्त विषय हो सकता है, और हिंदीवालों का कहना है - इन हिंदीवालों में मैं भी हूँ - कि यह शब्द संस्कृत के 'बंकिम' शब्द से निकला है; पर यह मानना पड़ेगा कि जहाँ 'बंकिम' शब्द में कुछ गंभीरता है, कभी-कभी कुछ तीखापन झलकने लगता है, वहाँ 'बाँके' शब्द में एक अजीब बाँकापन है। अगर जवान बाँका-तिरछा न हुआ, तो आप निश्चय समझ लें कि उसकी जवानी की कोई सार्थकता नहीं। अगर चितवन बाँकी नहीं, तो आँख का फोड़ लेना अच्छा है; बाँकी अदा और बाँकी झाँकी के बिना जिंदगी सूनी हो जाए। मेरे ख्याल से अगर दुनिया से बाँका शब्द उठ जाए, तो कुछ दिलचले लोग खुदकुशी करने पर आमादा हो जाएँगे। और इसीलिए मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि लखनऊ बाँका शहर है, और इस बाँके शहर में कुछ बाँके रहते हैं, जिनमें गजब का बाँकपन है। यहाँ पर आप लोग शायद झल्ला कर यह पूछेंगे - "म्याँ, यह 'बाँके' है क्या बला? कहते क्यों नहीं?" और मैं उत्तर दूँगा कि आप में सब्र नहीं; अगर उन बाँकों की एक बाँकी भूमिका नहीं हुई, तो फिर कहानी किस तरह बाँकी हो सकती है!

हाँ, तो लखनऊ में रईस हैं, तवायफें हैं और इन दोनों के साथ शोहदे भी हैं। बकौल लखनऊवालों के, ये शोहदे ऐसे-वैसे नहीं हैं। ये लखनऊ की नाक हैं। लखनऊ की सारी बहादुरी के ये ठीकेदार हैं और ये जान ले लेने तथा दे देने पर आमादा रहते हैं। अगर लखनऊ से ये शोहदे हटा दिए जाएँ, तो लोगों का यह कहना, 'अजी, लखनऊ तो जनानों का शहर है।' सोलह आने सच्चा उतर जाए।

जनाब, इन्हीं शोहदों के सरगनों को लखनऊवाले 'बाँके' कहते हैं। शाम के वक्त तहमत पहने हुए और कसरती बदन पर जालीदार बनियान पहनकर उसके ऊपर बूटेदार चिकन का कुरता डाटे हुए जब ये निकलते हैं, तब लोग-बाग बड़ी हसरत की निगाहों से उन्हें देखते हैं। उस वक्त इनके पट्टेदार बालों में करीब आध पाव चमेली का तेल पड़ा रहता है, कान में इत्र की अनगिनती फुरहरियाँ खुँसी रहती हैं और एक बेले का गजरा गले में तथा एक हाथ की कलाई पर रहता है। फिर ये अकेले भी नहीं

निकलते, इनके साथ शागिर्द-शोहदों का जुलूस रहता है, एक-से-एक बोलियाँ बोलते हुए, फबतियाँ कसते हुए और शोखियाँ हाँकते हुए। उन्हें देखने के लिए एक हजूम उमड़ पड़ता है।

तो उस दिन मुझे अमीनाबाद से नख्खास जाना था। पास में पैसे कम थे; इसलिए जब एक नवाब साहब ने आवाज दी, 'नख्खास' तो मैं उचक कर उनके इक्के पर बैठ गया। यहाँ यह बतला देना बेजा न होगा कि लखनऊ के इक्केवालों में तीन-चौथाई शाही खानदान के हैं, और यही उनकी बदकिस्मती है कि उनका वसीका बंद या कम कर दिया गया, और उन्हें इक्का हाँकना पड़ रहा है।

इक्का नख्खास की तरफ चला और मैंने मियाँ इक्केवाले से कहा - "कहिए नवाब साहब! खाने-पीने भर को तो पैदा कर लेते हैं?"

इस सवाल का पूछा जाना था कि नवाब साहब के उद्‌गारों के बाँध का टूट पड़ना था। बड़े करुण स्वर में बोले - "क्या बतलाऊँ हुजूर, अपनी क्या हालत है, कह नहीं सकता! खुदा जो कुछ दिखलाएगा, देखूँगा! एक दिन थे जब हम लोगों के बुजुर्ग हुकूमत करते थे। ऐशोआराम की जिंदगी बसर करते थे; लेकिन आज हमें - उन्हीं की औलाद को - भूखों मरने की नौबत आ गई। और हुजूर, अब पेशे में कुछ रह नहीं गया। पहले तो ताँगे चले, जी को समझाया-बुझाया, म्याँ, अपनी-अपनी किस्मत! मैं भी ताँगा ले लूँगा, यह तो वक्त की बात है, मुझे भी फायदा होगा; लेकिन क्या बतलाऊँ हुजूर, हालत दिनोंदिन बिगड़ती ही गई। अब देखिए, मोटरों-पर-मोटरें चल रही हैं। भला बतलाइए हुजूर, जो सुख इक्के की सवारी में है, वह भला ताँगे या मोटर में मिलने का? ताँगे में पालथी मार कर आराम से बैठ नहीं सकते। जाते उत्तर की तरफ हैं, मुँह दक्खिन की तरफ रहता है। अजी साहब, हिंदुओं में मुरदा उलटे सिर ले जाया जाता है, लेकिन ताँगे में लोग जिंदा ही उलटे सिर चलते हैं और जरा गौर फरमाइए! ये मोटरें शैतान की तरह चलती हैं, वह बला की धूल उड़ाती हैं कि इंसान अंधा हो जाए। मैं तो कहता हूँ कि बिना जानवर के आप चलनेवाली सवारी से दूर ही रहना चाहिए, उसमें शैतान का फेर है।"

इक्केवाले नवाब और न जाने क्या-क्या कहते, अगर वे 'या अली!' के नारे से चौंक न उठते।

सामने क्या देखते हैं कि एक आलम उमड़ रहा है। इक्का रकाबगंज के पुल के पास पहुँचकर रुक गया।

एक अजीब समाँ था। रकाबगंज के पुल के दोनों तरफ करीब पंद्रह हजार की भीड़ थी; लेकिन पुल पर एक आदमी नहीं। पुल के एक किनारे करीब पचीस शोहदे लाठी लिए हुए खड़े थे, और दूसरे किनारे भी उतने ही। एक खास बात और थी कि पुल के एक सिरे पर सड़क के बीचोंबीच एक चारपाई रक्खी थी, और दूसरे सिरे पर भी सड़क के बीचोंबीच दूसरी। बीच-बीच में रुक-रुककर दोनों ओर से 'या अली!' के नारे लगते थे।

मैंने इक्केवाले से पूछा - "क्यों म्याँ, क्या मामला है?"

म्याँ इक्केवाले ने एक तमाशाई से पूछकर बतलाया - "हुजूर, आज दो बाँकों में लड़ाई होनेवाली है, उसी लड़ाई को देखने के लिए यह भीड़ इकट्ठी है।"

मैंने फिर पूछा - "यह क्यों?"

म्याँ इक्केवाले ने जवाब दिया - "हुजूर, पुल के इस पार के शोहदों का सरगना एक बाँका है और उस पार के शोहदों का सरगना दूसरा बाँका। कल इस पार के एक शोहदे से पुल के उस पार के दूसरे शोहदे का कुछ झगड़ा हो गया और उस झगड़े में कुछ मार-पीट हो गई। इस फिसाद पर दोनों बाँकों में कुछ कहा-सुनी हुई और उस कहा-सुनी में ही मैदान बद दिया गया।"

"अरे हुजूर! इन बाँकों की लड़ाई कोई ऐसी-वैसी थोड़ी ही होगी; इसमें खून बहेगा और लड़ाई तब तक खत्म न होगी, जब तक एक बाँका खत्म न हो जाए। आज तो एक-आध लाश गिरेगी। ये चारपाइयाँ उन बाँकों की लाश उठाने आई हैं। दोनों बाँके अपने बीवी-बच्चों से रुखसत लेकर और कर्बला के लिए तैयार होकर आवेंगे।"

इसी समय दोनों ओर से 'या अली!' की एक बहुत बुलंद आवाज उठी। मैंने देखा कि पुल के दोनों तरफ हाथ में लाठी लिए हुए दोनों बाँके आ गए। तमाशाइयों में एक सकता सा छा गया; सब लोग चुप हो गए।

पुल के इस पारवाले बाँके ने कड़ककर दूसरे पारवाले बाँके से कहा - "उस्ताद !" और दूसरे पारवाले बाँके ने कड़ककर उत्तर दिया - "उस्ताद!"

पुल के इस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, आज खून हो जाएगा, खून!"

पुल के उस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, आज लाशें गिर जाएँगी, लाशें!

पुल के इस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, आज कहर हो जाएगा, कहर!"

पुल के उस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, आज कयामत बरपा हो जाएगी, कयामत!"

चारों ओर एक गहरा सन्नाटा फैला था। लोगों के दिल धड़क रहे थे, भीड़ बढ़ती ही जा रही थी।

पुल के इस पारवाले बाँके ने लाठी का एक हाथ घुमाकर एक कदम बढ़ते हुए कहा - "तो फिर उस्ताद होशियार!"

पुल के इस पारवाले बाँके के शागिर्दों ने गगन-भेदी स्वर में नारा लगाया - "या अली!"

पुल के उस पारवाले बाँके ने लाठी का एक हाथ घुमाकर एक कदम बढ़ाते हुए कहा, "तो फिर उस्ताद सँभलना!"

पुल के उस पारवाले बाँके के शागिर्दों ने गगन-भेदी स्वर में नारा लगाया - "या अली!"

दोनों तरफ के दोनों बाँके, कदम-ब-कदम लाठी के हाथ दिखलाते हुए तथा एक-दूसरे को ललकारते आगे बढ़ रहे थे, दोनों तरफ के बाँकों के शागिर्द हर कदम पर 'या अली!' के नारे लगा रहे थे, और दोनों तरफ के तमाशाइयों के हृदय उत्सुकता, कौतूहल तथा इन बाँकों की वीरता के प्रदर्शन के कारण धड़क रहे थे।

पुल के बीचोंबीच, एक-दूसरे से दो कदम की दूरी पर दोनों बाँके रुके। दोनों ने एक-दूसरे को थोड़ी देर गौर से देखा। फिर दोनों बाँकों की लाठियाँ उठीं, और दाहिने हाथ से बाएँ हाथ में चली गईं।

इस पारवाले बाँके ने कहा - "फिर उस्ताद!"

उस पारवाले बाँके ने कहा - "फिर उस्ताद!"

इस पारवाले बाँके ने अपना हाथ बढ़ाया, और उस पारवाले बाँके ने अपना हाथ बढ़ाया। और दोनों के पंजे गुँथ गए।

दोनों बाँकों के शागिर्दों ने नारा लगाया - "या अली !"

फिर क्या था! दोनों बाँके जोर लगा रहे हैं; पंजा टस-से-मस नहीं हो रहा है। दस मिनट तक तमाशबीन सकते की हालत में खड़े रहे।

इतने में इस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, गजब के कस हैं!"

उस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, बला का जोर है !"

इस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, अभी तक मैंने समझा था कि मेरे मुकाबिले का लखनऊ में कोई दूसरा नहीं है।"

उस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, आज कहीं जाकर मुझे अपनी जोड़ का जवाँ मर्द मिला!"

इस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, तबीयत नहीं होती कि तुम्हारे जैसे बहादुर आदमी का खून करूँ!"

उस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, तबीयत नहीं होती कि तुम्हारे जैसे शेरदिल आदमी की लाश गिराऊँ!"

थोड़ी देर के लिए दोनों मौन हो गए; पंजा गुँथा हुआ, टस-से-मस नहीं हो रहा है।

इस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, झगड़ा किस बात का है?"

उस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, यही सवाल मेरे सामने है!"

इस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, पुल के इस तरफ के हिस्से का मालिक मैं!"

उस पारवाले बाँके ने कहा - "उस्ताद, पुल के इस तरफ के हिस्से का मालिक मैं!"

और दोनों ने एक साथ कहा - "पुल की दूसरी तरफ से न हमें कोई मतलब है और न हमारे शागिर्दों को!"

दोनों के हाथ ढीले पड़े, दोनों ने एक-दूसरे को सलाम किया और फिर दोनों घूम पड़े। छाती फुलाए हुए दोनों बाँके अपने शागिर्दों से आ मिले। बिजली की तरह यह खबर फैल गई कि दोनों बराबर की जोड़ छूटे और उनमें सुलह हो गई।

इक्केवाले को पैसे देकर मैं वहाँ से पैदल ही लौट पड़ा क्योंकि देर हो जाने के कारण नख्खास जाना बेकार था।

इस पारवाला बाँका अपने शागिर्दों से घिरा चल रहा था। शागिर्द कह रहे थे - "उस्ताद, इस वक्त बड़ी समझदारी से काम लिया, वरना आज लाशें गिर जातीं।" - "उस्ताद हम सब-के-सब अपनी-अपनी जान दे देते!" - "लेकिन उस्ताद, गजब के कस हैं।"

इतने में किसी ने बाँके से कहा - "मुला स्वाँग खूब भरयो!"

बाँके ने देखा कि एक लंबा और तगड़ा देहाती, जिसके हाथ में एक भारी-सा लट्ठ है, सामने खड़ा मुस्कुरा रहा है।

उस वक्त बाँके खून का घूँट पीकर रह गए। उन्होंने सोचा - भला उस्ताद की मौजूदगी में उन्हें हाथ उठाने का कोई हक भी है?